श्री जिनेन्द्राय नमः ।

मानिक विलास ॥

१ पद—राग ठुमरी ॥

चलो भवि पावापुर में पूजन कों जिन राज ॥ टेक ॥ जहां वसुविधि हरि शिवत्रिय पाई महावीर महाराज ॥ चलो० ॥१॥ जिन के दर्शन तें अघ विनसत दरशात शिवमग साज । वसुविधि पूज रचाय गाय गुण कीजे आतम काज ॥ चलो० ॥२॥ वे प्रभु दीनद-याल जगत गुरु राखत जग की लाज । मा-निक या भवदधि अथाह में वे प्रभु धर्म जहाज ॥ चलो० ॥३॥

२ पद—राग होरी में ॥

जो सुख चाहो निराकुल क्यों न भजो जिनवीर ॥ टेक ॥ आयु घटे छिन ही छिन तेरी ज्यों अंजुलिको नीर ॥ जो० १ ॥ मात तात सुत नारि सुजन कोई भीर परें नहिं सीर । अपनो लखि पोखे सो तेरो विनसि जायगो शरीर ॥ जो० २ ॥ वे प्रभु दीन दयाल जगत गुरु जानत हैं पर पीर । भाव सहित ध्यावें भवि मानिक पावें भवदधि तीर ॥ जो० ३ ॥

३ पद—राग ठुमरी झंझोटी में ॥

जिनवर चरण भक्ति वर गंगा ताहि भजो भवि नित सुखदानी ॥ टेक ॥ स्याद्वाद हिमगिरिते उपजी मोक्ष महासागरहिं समानी ॥ १ ॥ ज्ञान विराग रूप दोऊ ढाये संयम भाव मगर हितहानी । धर्म ध्यान

जहां भमर परन हैं जामें शम दम शांति रस पानी ॥ २ ॥ जिन संस्तवन तरंग उठत है जहां नहीं भ्रमकीच निसानी । मोह महागिरि चूर करति है रत्न त्रय शुध पंथ ढलानी ॥ ३ ॥ सुर नर मुनि खगादि पंछी जहं रमतहि चित प्रशांतिता ठानी । मानिक चित निर्मल स्नान करि फिर नहिं होत मलिन भविप्रानी ॥ ४ ॥

४ पद—राग सारंग तथा देश की ठुमरी ॥

ज्यों तरुवर की छइयां-तन धन जानोरे भाई ॥ टेक ॥ घटत वढ़त चपलावत चंचल क्षण में जात पलाई ॥ ज्यों० १ ॥ तूं तो ज्ञान रूप चिद्गुण घन यह पुद्गल परजाई प्रकृति विरोधी तें रति मानी यह वूढ़ी चतुराई । २ ॥ या प्रसंग चहुंगति में भटको विषय जु विषफल खाई । तात मात

सुत नारि सुजन लखि अपनाये दुखदाई ॥ ३ ॥ तातें अब पर प्रीति तजो निज आतम में लो लाई । जिन वृष शुद्ध भजो अब मानिक पावो शिव ठकुराई ॥ ४ ॥

५ पद—राग सोरठ में ठुमरी ॥

निरग्रंथ यती मन भावें-कुगुरादिक नाहिं सुहावें ॥ टेक ॥ वीतराग विज्ञान भावमय शिवमारग दरशावें ॥ निर० १ ॥ रत्नत्रय भूषण जुत सोहत निज अनुभूति रमावें ॥ निर० २ ॥ बिन कारण जगबन्धु जगत गुरु हित उपदेश सुनावें ॥ निर० ३ ॥ चिर विभाव आताप हरन कों ज्ञानामृत झरलावें ॥ निर० ४ ॥ कर्म जनित आचार त्यागि कें परमातम कों ध्यावें ॥ निर० ५ ॥ मानिक भवि सतगुरु सुचन्द्र लखि आकुल ताप बुझावें ॥ निर० ६ ॥

६ पद--राग सोरठ कंफोटी में ॥

जगत में सम्यक् सैली सार। जग०॥टेक॥ नीठि मिली मोहि बड़े भाग्य तें दरशन मोह निवार ॥ जग० १ ॥ दुर्लभ नरभव पाय तहां वह मिले कुगुरु व्योहार। सो कुसंग तजि सैली आयो पायो वृष सुखकार ॥जग०२॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म आदि सब जाने मिथ्याचार। सैली के परताप तजे हम जैनाभास लवार ॥ जग० ३ ॥ आपापर को भेद पिछानो भानो चिर भ्रमभार। मानिक जयवंतो नित सैली शिवमारग दातार ॥जग०४॥

७ पद–रागपद ॥

भोरो मति तेरीरे सुज्ञानीरा लागे हो विषयनि धाइ ॥ टेक ॥ इन प्रसंग चहुंगति भटकाये पाये दुख अधिकाय ॥ भोरी० १॥ पराधीन छिन अधिक हीन इक छिनक

मांहिं बिनसाइ । बाधा सहित हेतु बंधन को शुद्ध ज्ञान मनलाइ॥ भोरी० २ ॥ इन्द्रिय जनित इन्हें तूं भ्रमतें जानत है सुखदाइ । भ्रमतजि ज्ञानदृष्टि करि देखो यह पुद्गल पर जाँइ ॥ भोरी० ३॥ ये दुखमय तूं सुखमय मानिक भेद विज्ञान कराइ। निजानंद अनुभव रस में छकि अन्य सवे छुटकाइ ॥ भोरी० ४ ॥

८ पद—राग पद ॥

चेतन यह कुधि कोन सयानी जिन मत रीति विपर्यय मानी ॥ टेक ॥ भूलि रहोनित कुलाचार में हित अनहित की परख न जानी । कुगुरादिक के पक्षपातकरि स्रवन सुनी नहिं स्रो जिनवानी ॥ चेत० १॥ वीतराग सर्वज्ञ देव छवि की बहुधा सराग विधि ठानी । प्रगट कुदेव क्षेत्र पालादिक

तिन्हें भजत शठ निपट अज्ञानी ॥ चेत०२॥ नग्न लिंग विन और न जिनमत माहिं न श्री जिनवर वरनानी। करि प्रतीति सेवत कुगुरुनि कों श्री जिन अज्ञाभंग करानी ॥ चेत० ३ ॥ मोह क्षोह विन धर्म कहो निज ताकी तूंने सुधि विसरानी। पुण्य कर्म उत्पत्ति हेतु में करी अनीति महा दुखदानी ॥ चेत० ४ ॥ पापो दुष्ट हटी कपटी शठ भ्रष्ट लोभ मदकरि अभिमानी। तिनसों नेह द्वेष धर्मिन सों यह दुर्बुद्धि महा दुखखानी ॥ चेत० ५॥ सप्तक्षेत्र धन खरच कथन सुनि वहुत करत है आना कानी। विषय खेत कुगुरुनि के हेत धन खरच देत इमि पाव्रस पानी ॥ चेत० ६ ॥ जिन मत मांहिं सर्व आगम में रागद्वेप भ्रम नाशक दानी। खोलि हृदय दृग स्वपर परखि अव छांड़उ रिप-

लाचार कहानी ॥ चेत० ७॥ फिरि यह दाव कठिन मिलने का जाते पुरुषारथ कर ज्ञानी॥ सब विकलप तजि सुगुरु सीख भजि मानिक यह हित हेत निशानी ॥ चेत० ८ ॥

९ पद—राग दादरा चाल इगहाई ॥

यह देखो जगजीवन कें अलट परी॥यह० ॥ टेक ॥ गाडुरिवत प्रवाह इमि पड़ते हित अनहित सुधि बुधि विसरो ॥ यह० ॥ १ ॥ हांडी परखि ग्रहें दमड़ी की विन परखें जाहि कसर परी। परमारथ हित देव धर्म गुरु परखन नहीं उरमति जिगरी ॥यह० २॥ अनरथ दंड रूप कारज की लगो रहित नित लगनि खरी। प्रोजन भूत शास्त्र सामायक चित सरधा नहिं नेक धरी ॥ यह० ॥ ३ ॥ सत गुरु सीख गहत नहिं शठ हठ पकड़त जिमि हांडिल लकड़ी। मानिक स्व-

पर परखि तजि दुरमति भजि जिन वृष तेरी सफल घरी ॥ यह० ॥ ९ ॥

१० पद—राग झझोटी ॥

ते जग मांहिं अपंडित जानो—जिनने हित अनहित न पिछानो ॥ टेक ॥ भूलि रहे नित शब्द अर्थ में वस्तु स्वरूप नहीं सरधानो ॥ ते० ॥ १ ॥ विषय कषाय भाव वाढ़त मुख काढ़त कर्कश वच असुहानो । रटत काकवत सिद्धांतन को शठ जन वंचन कों सु ठिकानो ॥ ते० ॥ २ ॥ ख्याति लाभ पूजादि चाह चित पंडितपनों आपु ही मानो । साधर्मिन सों करत द्वेष निन अविनय को सुधरें हठवानो ॥ ते० ३ ॥ तिनि कें विपरीत शास्त्र होन तिनि दुर्गति मारग कियो पयानो । मानिक ये लक्षण लखि तिनके तजहु प्रसंग सदा मतिवानो ! ॥ ते० ४ ॥

११ पद—राग झंझोटी ॥

ते जग में सत पंडित जानो—जिन निज पर हित अनहित पिछानो ॥ टेक ॥ शब्द शुद्ध पुनि अर्थ शुद्ध जिन भाव शुद्ध लखि करि सरधानो ॥ ते० १ ॥ हित मित वचन खिरत मुखतें मानों परमानंद जलद बरसानो । निःसंदेह प्रश्नोत्तर करते ताकरि भवि भ्रम दाघ बुझानो ॥ ते० २ ॥ जिन सिद्धांतनि के मर्मी उर साधर्मी लखि अति हरखानो । चित प्रभावना माहिं रहत नित जिनकें मिथ्या भाव पलानो ॥ते० ३॥ ख्यात लाभ पूजादि चाह बिन जिनने जात्यादिक मद भानो। करि प्रसंग तिनको अब मानिक जो चाहत हो शिव पुर थानो ॥ ते० ४ ॥

१२ पद—राग झंझोटी

मिथ्या दृष्टी जीव जगत में इमि प्रपंच

करते हरखाई ॥ टेक ॥ वस्तु स्वरूप न जानत ठानत पक्षपात धरि करन लड़ाई ॥१॥ देव धर्म गुरु रूप गहन नहिं चित अभिमान धरत अधिकाई । भूले हैं कुगुरुनि प्रसंग करि करण विषय विष खात अघाई ॥२॥ पुण्य कर्म शिवमारग ठानत शुद्ध रूप करतूति न पाई । साधर्मिन के छिद्र लखत चित द्वेष धरत मुख करत बड़ाई ॥ ३ ॥ भर्म भाव में भर्मत डोलत कर्म कलोलनि में भटकाई । अहंकार ममकार करत चित धरत कषाय भाव कलुषाई ॥४॥ स्वपर जीव को दया न जानत अघकारण ठानत चितलाई । मानिक ऐसे जीवन को नित संग तजो जिनराज धुआई ॥ ५ ॥

१३ पद—राग सोरठ ॥

अब हम सुनें सुगुरु के वैना—जासों खुले

जुसम्यक् नैना ॥ अब० टेक ॥ स्वपर पिछाना भ्रम तम भाना जाना अव मत जैना ॥ अब० १॥ हित अरु अहित सुतिन के कारण जानि लिये सुख देना ॥ अब० २ ॥ कुगुरु सुगुरु बच बिन पहिचाने मिथ्याभाव मिटैना ॥ अब० ३ ॥ तिनके जानत सरधा ठानत जग में जीव भ्रमैना ॥ अब० ४ ॥ मानिक सुगरु सीख नौका चढ़ि क्योंकर जीव तरेना ॥ अब० ५ ॥

१४ पद—राग झझोटी ॥

जीव अवस्था तीन प्रकारा—जानत ज्ञानी ज्ञान संभारा ॥ टेक ॥ वहिरातम अंतर आतम परमातम रूप लखो सुखकारा॥जीव० ॥१॥ विषय भोग में मगन रहत नित हित अनहित को नाहिं बिचारा । हेय उपादेय लखत न शठ बहिरातम भ्रमत भवार्णवधा-

रा ॥ जीव० २ ॥ व्रत विन सम्यक् युत ज-
घन्य है ज्ञान विराग शक्ति विस्तारा। व्रत
प्रमाद युत् मध्यम अंतर आतम करत कर्म
गण क्षारा ॥ जीव० ३ ॥ षष्ठम गुणतें क्षीण
मोहलों सो उत्कृष्ट कहे गणधारा। निज
स्वभाव साधक भव बाधक सकल विभाव
भाव वहि डारा ॥ जीव० ४ ॥ श्री अरहंत
सकल परमातम लोका लोक विलोकनहारा
निकल सिद्ध जगशीस वसत विन अंत ल-
सत शिव शर्म संभारा ॥ जीव० ५ ॥ व-
हिरातमता हेय जानि पुनि अंतर आतम
रूप सम्हारा। परमातम कों ध्याय निरं-
तर मानिक जो सुख होय अपारा॥जी०६॥

१५ पद—राग ठुमरी ॥

तिन जीवन सों क्या कहना—जे निज

हित अहित लखैना ॥ टेक ॥ मोह वारुणी पी अनादितें आपा पर परखैना ॥ तिन० १ ॥ तन धन गृह सेवक परिजन जनये पर प्रगट दिखेना ॥ तिन० २ ॥ देव कुदेव सुगुरु कुगुरादिक इन में भेद गिनेना ॥ तिन० ३ ॥ शिव सुखदानी श्री जिन वानी ताका स्वरस चखैना ॥ तिन० ४ ॥ हित के कारण साधर्मीजन तिनसों नेह करैना ॥ तिन० ५॥ मानिक ऐसे जीवनि कूं लखि भवि विलखे हरखैना ॥ तिन० ६ ॥

१६ पद—राग सोरठ तालदीपचंदी ॥

आकुल रहित होय इमि निशि दिन कीजे तत्व बिचारा हो ॥ टेक ॥ को मैं कहा रूप है मेरो पर है कौन प्रकारा हो ॥ आकुल० १ को भवकारण वंध कहा को आस्रव रोकनहारा हो । भरत कर्म बंधन काहे तें स्था-

नक कौन हमारा हो ॥ आकुल० २ ॥ इस अभ्यास किये पावत हैं परमानंद अपारा हो । मानिक ये ही सार जानिके कीजे बा-रंबारा हो ॥ आकुल० ॥ ३ ॥

१७ पद—राग झझोटी

सुथिर चित्त करि अहनिशि निश्चय कीजे येम विचारा हो ॥ टेक ॥

मैं चित ज्ञान रूप है मेरो पर जीव निर-धारा हो ॥ सुथिर० १॥ भ्रम भव कारण दुख वंधन सम संवर है सुखकारो हो । त्रिर विभावता झरण निर्जरा सिद्ध स्वरूप ह-मारा हो ॥ सुथिर० २॥ धनि धनि जनजिन यह विचार करि महा मोह निरधारा हो । तिनके चरण कमल प्रति मानिक युगल पाणि शिर धारा हो ॥ सुथिर० ३

१८ पद--राग झंझोटी ॥

आकुलता दुखदाई तजो भवि अकुलता दुखदाई हो ॥ टेक ॥ अनरथ मूल पाप की जननी मोहराय की जाई हो ॥ आ० १ ॥ अकुलता करि रावण प्रतिहरि पायो नर्क अघाई हो । श्रेणिक भूप धारि आकुलता दुर्गति गमन कराई हो ॥ आ० २ ॥ आकुलता करि पांडव नरपति देश देश भटकाई हो । चक्री भरत धारि आकुलता मान भंग दुख पाई हो ॥ आ० ३ ॥ आकुल विना पुरुष निरधन हू सुखिया प्रगट दिखाई हो । आकुलता करि कोटीध्वज हू दुखी होय विललाई हो ॥ आ० ४ ॥ पूजा आदि सर्वकारज में विघन करण बुध गाई हो । मानिक आकुलता विन मुनिवर निरआकुल पद पाई हो ॥ आ० ५ ॥

१९ पद—राग झंझोटी ॥

जाही समय मिटो भव्यन को महामोह
चिर पगो करम सों ॥ टेक ॥ भेद ज्ञान रवि
प्रगट भयो सुगयो मिथ्या तम हृदय सदन
सों ॥ जाही० ॥ १ ॥ सोंज लखे निज परजु
भिन्न ये परिचय करे शुद्ध अनुभवसों । ज्ञान
विरागी शुभमति जागी चेतनता न कहे
पुदगल सों ॥ जाही० ॥२॥ यों प्रवीन कर-
तूति करत नित धरत जुदाई सदा जगत
सों । मानिक लखो प्रगट पावक ज्यों भिन्न
करत है कनक उपलसों ॥जाही० ॥३॥

२० पद—राग पद ॥

तत्त्वारथ सरधानी ज्ञानी इमि सरधान
धरत सक नाहीं ॥टेक॥ सुख दुख कर्माश्रित
जानत मानत निज में न करम परछांहीं। मैं
चित पिंड अखंड ज्ञान घन जन्म मरण

है पुद्गल मांहीं ॥ १ ॥ रोगादिकतो देहाश्रित हैं धन कुटुंब पर प्रगट दिखाहीं। शुभ अरु अशुभ उदय सुख दुखमें हर्ष विषाद न उर उमगांहीं ॥ २ ॥ शुभ मय राग होत है ताकों हेय गिनत निज परणति नाहीं। कब निर बिकलप होइ दशा निज आपुन मांहिं आपु निवसांहीं ॥ ३॥ आपुन सम सब जीवन जानत वृष प्रभाव लखि अति हर्षाहीं। या कलि मांहिं अलप हैं तिन पर मानिक मन वच तन बलि जांहीं ॥४॥

२१ पद—राग ठुमरी देश में ॥

अब मोहि जानि परी जग में जैन धर्म है सार ॥ अब० ॥ टेक ॥ जामें देव धर्म गुरु आगम तत्त्व कहो निरधार ॥ अब०१॥ दोषावर्ण रहित जग ज्ञायक महादेव सुखकार। ज्ञान विरागी परिग्रह त्यागी सुगुरु स्वपर हितकार ॥ अब० २ ॥ मोह क्षोह

विन धर्म कहो निज शांति भाव रसधार। सप्ततत्व षट् द्रव्य पदारथ मुख्य और उपचार ॥ अब० ३ ॥ हित अरु अहित सुतिन कारण चित हेयाहेय विचार। मानिक या विन मुक्ति नहीं है सब संसार असार ॥ अब० ४ ॥

२२ पद—लावनी (सप्तव्यसन की)

जूवा मांस मद वेश्या चोरी खेटक पर नारी। इन सातो विसननकी हकीकत कहूं न्यारी न्यारी ॥ टेक ॥ [जूवा] सकल पाप को बाप आपदा को कारण जानो। कलह खेन दुर्यश के हेत दारिद को ठिकानो ॥ सत्य रूप निजगुण हो सो ततछिनहीं पलानो। रुद्र ध्यान को वास जासु नाहिं देखन बुधिवानो ॥ शुभ अरु अशुभ भाव जूवा तजि भजि वृष सुखकारी। इन सातो० ॥ १ ॥ [मांस] जंगम जीव को नाश होत तब मांस

कहाईरे । सपरस आकृति नाम गंध लखि घिन उपजाईरे ॥ नर्कयोग निर्दई खांय नर नीच कसाईरे । नाम लेत तजि देत असन उत्तम कुल भाईरे ॥ तन में मगन भाव यह भक्षण तजि अति दुखकारी । इन सातो० ॥ २ ॥ [मदिरा] क्रमिकुल राशि कुवास जासु छूवत शुचिता जावे । नीच कुलीमद पान करत निज तन सुधि विसरावे ॥ भूमि माहिं मुख फाडि पडत तहां श्वान मूत्र प्यावे। पुत्री मात बधू सम लखि अनुचित ही वतलावे ॥ मोह भाव वारुणी तजो भजि निज स्वभाव भारी । इन सातो० ॥३॥ [वेश्या] अशुचि खानि नित असत बानि बोलति तजि लज्यारे । धनहित प्रीति करत निरधन लखि तुरत ही तज्यारे ॥ मास खान मदपान करत किलविष जन रज्यारे । प्र-

गट पापिनी यारथधू लखि बुधजन भज्यारे ॥ कुमति भाव गणिका तजि भजि निज परणति हितकारी । इन सातो० ॥४॥ [चोरी] करत तस्करी तासु हृदय दुर्ध्यान दहनिजारे । पीटे धनी विलोकि लोक निर्दय मिलि अतिमारे ॥ प्रजा पाल करि कोप तोप थूरी धरि संहारे । लखि वंदीगृह प्रगट त्रास मरि नीची गति धारे ॥ पर की चाह भाव चोरी तजि ग्रह निज निधि प्यारी ॥ इन सातो० ॥ ५ ॥ [शिकार] निरपराध निर्बल भय आतुर खटकत भगिजाहीं । ऐसे दीन मृगादिक प्रानी निवसत वन माहीं ॥ तिन्हें अखेटी रसन लंपटी घातत हरपाई । जीव घात करि नर्कजात जिन आगम फरमाई ॥ निर्दय भाव शिकार त्यागि करि जीवन सों यारी । इन

सातो० ॥ ६ ॥ [पर स्त्री] महा पापजरु नारि पराई रमें सुक्ख काजें। जूंठ खानि जिमि श्वान खानि चित नाहिं कुधी लाजें॥ ता जनतें दृग ज्ञान चरण सम्यक्त तजि भाजें। या भव त्रास नर्क तप्तायस की पुतली दागें॥ पर धी भाव नारि पर तजि करि कीरत उजियारी। इन सातो० ॥ ७ ॥ [फलवर्णन]पांडव नरपति जुवा खेलि तिनि सही विपति भारी। मांस खाय वकराय सुरा वश यादो गण जारी॥ चारुदत्त वेश्यावश होकर सही वहुत ख्वारी। चोरी करि शिव भूत विप्र पुनि पाई विपतारी॥ आखेटक वश ब्रह्म दत्त मृत दुर्गति थिति धारी। नर्क गती रावण ने पाई इच्छित पर नारी। द्रव्य भाव करि सातो सेवत ते नि गोदचारी। इन सातो० ॥८॥ जे सतसंग भजत जिन

आगम तिन भव थिति टारी । कुगुरु कुदेव कुधर्म त्यागि शिर जिन आज्ञा धारी॥ हित अरु अहित सुतिन के कारण तिन ने परखारी । द्रव्य भाव व्यसन कूं त्यागिते परणें शिवनारी ॥ तिन को वार वार कहि मानिक वंदना हमारी । इन सातो० ॥६॥

२३ पद—गज़ल ॥

जिनराज को सुमिरले क्या वक्त पाया है ॥ टेक ॥ नर भव सुथल सुकुल में सहजे तूं आया है।तन धन के जो नशे में आपा भुलाया है ॥ जिन० १॥ सुत मात तात त्रियसों नेहा लगाया है। निशि दिन वेहोश होकर विषयों लुभाया है ॥ जिन० २ ॥ कुगुरादि करि प्रसंग जिनागम न भाया है। करि मेरो मेरी नरभव नाहक गमाया है ॥ जिन० ३ ॥ इस जगत गहर भहर के अथ

तीर आया है । अब चेत चेत मानिक सत गुरु जताया है ॥ जिन० ४ ॥

२४ पद—गज़ल ॥

जिन रागद्वेष त्यागः सो सत गुरु है हमारा । तजि राज ऋद्धि तृणवत् निजकाज निहारा ॥ टेक ॥ रहता है वो वनखंड में धरि ध्यान कुठारा । जिन महामोह तरुकों जड़ मूल उखारा ॥ जिन० १ ॥ जगमांहि छारहा है अज्ञान अंध्यारा । विज्ञान भान तम हर घर मांहि उजारा ॥ जिन० २॥ सर्वांग तजि परिग्रह दिग् अंबर धारा । रत्न त्रयादि गुण समुद्र शर्म भंडारा ॥ जिन०३॥ विधि उदय शुभाशुभ में हर्ष अरति निवारा । निज अनुभव रस मांहिं कर्म मल को पखारा ॥ जिन० ४॥ परवस्तु चाह रोकि पूर्व कर्म संहारा । पर द्रव्य से जुभिन्न

चिदानंद निहारा ॥ जिन० ॥ ५ ॥ शुक्लाग्नि कों प्रजालि कर्म कानन जारा। तिन मुनिकों देखि मानिक नमस्कार उच्चारा॥ जिन०६॥

२५ पद–राग मल्हार तथा झंझोटी ॥

अब हम जैन धरम धन पाया । चाह रही न कछू मन में जब कर चिंतामणि आया ॥ टेक ॥ चिरतें रंक भयो भ्रमकरि नाना गति में भटकाया । सुगुरु दयाल न-साइ महाभ्रम निज धन निकट दिखाया ॥ अब० १ ॥ रत्नत्रय मय है अटूट साधर-मिन ये पर खाया । हृदय कोष में राखि निरंतर दिन प्रति चित में भाया ॥अब०२॥ कुगुरादिक बहु फिरत लुटेरे तिन का संग छुट काया । इन्द्रिय चपल चोर ढिंग बैठे तिन का यत्न करायो ॥ अब० ३ ॥ या धन रक्षक देव सुगुरु श्रुत की प्रतीति उरल्या-

या । सारथवाह भये शिवपुर के तिनसूं नेह लगाया ॥ अव० ४ ॥ जिन पाया तिन सुगुरु सुध्याया तिन का यश जग गाया । या धन को विलसें जे मानिक तिन अनंत सुख पाया ॥ अव० ५ ॥

२६ पद—राग दीपचदी तथा होरी सोरठ में ॥

जबै कोऊ जाविधि मन कों लगावै। तब परमातम पद पावै ॥ टेक ॥ प्रथम सप्ततत्वनि की श्रद्धा धर तन संयम लावै। सम्यक ज्ञान प्रधान पवन बल भ्रम वादर विघटावै ॥ जबै० १ ॥ वर चरित्र निज में निज थिर करि विषय भोग विरचावै । एक देश वा सकल देश धरि शिवपुर पथिक कहावै ॥ जबै० २ ॥ द्रव्य कर्म नो कर्मभिन्न करि रागादिक बिनसावै। इष्ट अनिष्ट बुद्धि तजि पर में शुद्धातम को ध्यावै ॥ जबै०३॥

नय प्रमाण निक्षेप करण के सब विकल्प छुटकावे । दरशन ज्ञान चरण मय चेतन भेद रहित ठहरावे ॥ जवे० ४॥ शुक्ल ध्यान धरि घाति घाति करि केवल जोति जगावे । तीनकाल के सकलज्ञेय युत् गुन पर्यय झलकावे ॥ जवे० ५ ॥ या क्रमसों बड़भाग्य भव्य शिव गये जांहिं पुनि जावे । जयवंतो जिन वृष जग मानिक सुरनर मुनि यश गावे ॥ जवे० ६॥

२७ पद—राग सोरठ ॥

कब निज आतम के गुण गास्या । जासूं फेरि नहीं दुख पास्या ॥ टेक ॥ कब गृहवास छांड़िवन सेऊं निज अनुभूति लखास्या ॥ कब० १ ॥ कब थिर योग धारि एकासन नेकन चित्त चलास्या । कब मैं ध्यान चमू सजिकरि बल मोहाराति भगास्या ॥ कब०२॥ भेद ज्ञान करि निज में निज धरि पर पर-

णति छुटकास्या । ऐसी दशा होय मानिक कव जीवन मुक्ति कहास्या ॥ कव० ३ ॥

२८ पद–राग ईमन धीमातिताले में ॥

प्रभु जी हम ने अघ वहु कीने ॥ टेक॥ पंच पाप में मगन रहत नित विषय भोग चित दीने ॥ प्रभु० १ ॥ पर मेंइष्टानिष्ट ठानि कें रागद्वेष रसभीने । आर्तरुद्र दुर्ध्यान धारिकें नर्क वसेरे लीने ॥ प्रभु० २ ॥ अधम उधारक शिव सुखकारक सुनियत यश प्राचीने । वीतराग लखि जांचत मानिक सम्यक् रत्न सुतीने ॥ प्रभु० ३ ॥

२९ पद–राग रेखता ॥

जिय काल घटा देह सदन छावने लगी। छावने लगी जो ये डरावने लगी ॥ जिय० ॥टेक॥ यह विरधःपन प.त्रस भ्रम बदरा उठें जोर । अहे दूसरें उर तृष्णा पवन चलति है चहुं ओर ॥ त्रय योग चपल चपला

चमकावने लगी । जिय० १ ॥ मिथ्यात्व नि-
शि अंधियारी लगी रोग की झड़ियां । यह
आयु बीती जाति ज्यों घटियाल की घड़ि-
यां ॥ दुर्गति विरूप सरिताजु बहावने लगी
॥ जिय० २ ॥ नर भव सुकुल सुथैली बड़े
भाग्यतें पाई । जिन वाणि धर्म औषधि
नित सेवोरे भाई ॥ मानिक जरादों व्या-
धी विनसावने लगी । जिय० ३ ॥

३० पद—राग रेखता ॥

विज्ञान छटा कर्म मल बहावने लगी ।
बहावने लगी जी मन भावने लगी ॥ विज्ञा०
॥टेक॥ यह काल लब्धि पावस ऋतु आई है
अति जोर । दूसरे उर शुद्ध भाव बदरा उठे
घोर ॥ त्रय कारण रूप चपला चमकावने
लगी ॥ विज्ञा० १ ॥ जहां शाम्य शशि प्र-
काशत भ्रम तिमिर जुनसिया । वैराग्य च-
लत पवन शांति उदक वरसिया ॥ परवस्तु

चाह दाहकों बुझावने लगी ॥ विज्ञा० ॥२॥ तत्वनि की ऊहापोह जहां घालो हिंडोरा तहां झूले सुमति नारि चिदानंद के जोरा॥ निज परणति सखी निज में झुलावने ल-गी ॥ विज्ञा० ३ ॥ या भांति छके दम्पति निरद्वंद बाग में। लागे हैं अति उछाह स्व पर सौंज त्याग में। तिन मानिक लखि शिवत्रिय ललचावने लगी ॥ विज्ञा० ४ ॥

३१ पद—राग सोरठ तिताला ॥

कर जिय निज सुरूप विचार-जातें होहु भवदधि पार ॥ कर० ॥ टेक ॥ काम भोग प्रबंध कथनी सुनिय तें बहुवार। अनुभवन परिचय सुकरते गये काल अपार ॥कर०१॥ देव रागी गुरु अत्यागी धर्म हिंसाकार। इन प्रसंग अभंग दुख बहु लहोते अनिवा-र ॥ कर० २॥ या प्रकार मिथ्यात्त्व करितूं परो भवदधि धार। एक परतें भिन्न आ-

तम दुर्लभ है संसार ॥ कर० ३ ॥ नीठिकरि अब बड़े भागनि आयो जगत किनार । तत्व रुचि करि करहु मानिक सफल नर अवतार ॥ कर० ४ ॥

३२ पद—राग झंझोटी ॥

आतम रूप निहारो शुद्ध नय आतम रूप निहारा हो ॥ टेक ॥ जाको विन पहिचान जगत में पायो दुःख अपारा हो॥ आत० १ ॥ बंध पर्स विन एक नियत है निर्विशेष निरधारा हो । परतें भिन्न अखिन्न अनोपम ज्ञायक चिन्ह हमारा हो ॥ आत० २ ॥ भेद ज्ञान रवि घट परकाशत मिथ्या तिमिर निवारा हो । मानिक बलिहारी जिन की तिन निज घट मांहि सम्हारा हो ॥ आत० ३॥

३३ पद—राग गौड़ मल्हार हिंडोरा ॥

जगत हिंडोरनारे घालो आलो मोह

कदम तरुडार ॥ जग० ॥ टेक ॥ कुमति कु-
रमनी चिदानंद दंपति झूलत करि मनुहार
॥जग०१॥ चहुंगति गमनजुडोरी जामें वड़ी ब-
हुत दुखकार । जहां पच इंद्रिय सखी झु-
लावत झोकन नाहिं सम्हार ॥ जग० २ ॥
भरम भाव वादर उमहत तहां वरसत है म-
द वार । योग चपल तहां चपला चमकत
विधि शुभ अशुभ बयार ॥ जग० ३ ॥ इहि
विधि अनंतकाल झूलत जिय पायो दुःख
अपार । मानिक चतुर पुरुष जानों जिनि
यह झूलन दियो टार ॥ जग० ४ ॥

३४ पद—होरी काफी में ॥

जिन मत तिन अजहुं न पायो । जिन्हें
कुगुरुनि बंहकायो ॥ जिन० ॥ टेक॥ नरभव
सुथल सुकुल जिन वृष लहि पै विपरीत ग-
हायो । हिताहित ज्ञान नसायो ॥ जिन० १॥
निर्विकार जिनचंद छवीकें चंदन ले लिप-

टायो । परिग्रह धारिन कों गुरु माने तिन हीं कों नमन करायो । कहैं हम भाव न भायो ॥ जिन० २ ॥ कुलाचार कूं धर्म जानि धनदान पुण्य ठहरायो । लंघन कूं उपवास ठानि कें वस्तु स्वरूप न पायो ॥ वृथा तन कष्ट करायो ॥ जिन० ३ ॥ जिन ग्रह मांहिं मोम की बाती करि उत्सव मन भायो । सचित वस्तु सजि निशि श्री जिन भजि पाप पंथ में धायो ॥ कहा भयो जैनी कहायो ॥ जिन ॥४॥ श्री जिनेन्द्र की माल नाम करि धरि बहुमोल करायो । केवल ज्ञान छवीताको पंचामृत न्हवन करायो ॥ कहैं आज जन्म बधायो ॥ जिन० ५ ॥ रण श्रंगार जु आदि कथन सुनि अंग अंग हरषायो । भोजन भूत तत्व सुनि विलखे ताकूं कलह बतायो ॥ तिमिर मिथ्या दृग छायो ॥ जिन० ६ ॥ मान

वढ़ावन कों जिन प्रतिमा धरि जिनभवन करायो। तामहिं पद्मावति भैरव धरि तेल सिंदूर चढ़ायो ॥ वहुत संसार वढ़ायो ॥ जिन० ७ ॥ तर्पनादि यज्ञोपवीत तिलकादि कुभेष वनायो। अन्य मतो सादृश किरिया करि मन में नाहिं लजायो ॥ कहें जिन आज्ञा मायो ॥ जिन० ८ ॥ कै धन होय कै वैरी विलसें कै परिवार वढ़ायो। कै अरोगता के सुभोगता इन फल मांहिं लुभायो ॥ वृथा विकलप उपजायो। जिन० ९ ॥ देव धर्म गुरु परखि शास्त्र उर तत्वारथ रुचि लायो। शैली शुद्ध सेइ अव मानिक ज्यों सुख होय सवायो ॥ सदा समरस सरसायो ॥ जिन० १० ॥

३५ पद--दादरा जिला

उमरिया रे योंही वीती जाय ॥ टेक ॥ या विचार में चतुर रहत हैं मूरख चितना

सुहाय ॥ उम० १ ॥ बालापन ख्यालनि में खोयो तरुन विषय विष खाय। थिरथापन तरु पत्र जानि यम पवन लगत झरिजाय ॥ उम० २ ॥ दुर्लभ नर भव पाइ नाहिं शठ कुगुरुनि सेइ गमार। काग उड़ावन डारि उदधिमणि फिर पीछे पछताय ॥ उम० ३ ॥ बनि आवे तो कर उपाय यह औसर फिर न लहाय। सैठो शुद्ध सेय मानिक जासूं अविनाशी पदपाय ॥ उम० ४ ॥

३६ पद—राग टप्पो जंगला ॥

सुज्ञानीरा कुगुरोंदी नीरे मन जायरे॥टेक॥ पंच पापकरि मलिन रहित नित विषय क-पाय सुभायरे ॥ सुज्ञानी० १ ॥
तिनि प्रसंग चहुंगति भटकायो दुखपायो अ-धिकायरे॥ सुज्ञानी० २ ॥ ये पाथर का नाव प्रगट है मूढ़न लेत डुबाय रे ॥ सुज्ञानी० ३॥

सुगुरु सीख नौका चढ़ि मानिक भव समुद्र तरिजायरे ॥ सुज्ञानी० ४ ॥

३६ पद—राग टप्पो जंगला ॥

सुज्ञानीरा सुगुरुनि के गुनगाय ॥सुज्ञानी० ॥टेक॥अंबर बिन मुनि नगन दिगंबर संवर भूषित काय ॥ सुज्ञानी० १ ॥ वीतराग विज्ञान भाव मय अष्ट कर्म विनसाम ॥ सुज्ञानी० ॥ २ ॥ शांति छवी रवि तासु निरखते भवि सरोज विकसाय ।सुज्ञानी० ३॥ हित मित बचन अमी जनु बरषत भव भ्रम दाघ पलाय ॥ सुज्ञानी० ४ ॥ मानिक सतगुरु गुण सुमिरनकरि अशुभकर्म नसिजाय॥सुज्ञानी०५॥

३७ पद—टप्पोराग जगला ॥

सुज्ञानीरा सुगरु सीख उरलाय ॥ सुज्ञानी० ॥टेक॥ सम्यक दरशन ज्ञान चरन मय शिवमग दियो वताय ॥ सुज्ञानी० १ ॥ नय निश्चय व्यवहार दुहुनिकरि लखि निज

गुन सुखदाय ॥ सुज्ञानी० २॥ तजि विभाव निजभाव भाय ज्यों ह्वावे शिवपुर राय ॥ सुज्ञानी० ३ ॥ सतगुरु सीख गहो अब मानिक फेरिन भव भटकाय ॥ सुज्ञानी० ४ ॥

३८ पद—राग देश तथा ईमन ॥

जिन आगम मो मन भावे । म्हाने दुःश्रुत नाहिं सुहावे॥ जिन० टेक ॥ स्याद्वाद पदकरि शोभित है सब संदेह नसावे ॥ जिन० ॥ १ ॥ भूल अनादी तुरत मिटावे निज पर तत्त्व लखावे । हित अरु अहित सुतिन कारण बिच हेयाहेय जतावे ॥जिन०॥२॥ देव धर्म गुरु रूप दृढ़ावे विषय भोग बिरचावे । सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण मय शिव मारग दरसावे ॥ जिन० ३ ॥ याकलि माहिं प्रगट श्रुत मानो देव सुगुरु बतरावे । मानिक जे सरधान धरत तिनको भवसिंधु तरावे ॥ जिन० ॥ ४ ॥

३९ पद—राग देश तथा ईमन ॥

जिन मत लिंग तीन विधि वरने। तिन को सरधा भवि करने ॥ टेक ॥ मुनि श्रावक उत्कृष्ट आर्जिका एही भवदधि तरने ॥ जिन० १ ॥ वाह्याभ्यंतर संग रहित जिन रूप यथा विधि धरने । खंड वस्त्र वा कटि कोपीन श्रावक उत्कृष्टा चरने ॥ जिन० २॥ स्वेत साटिका धरति आर्जिका राग द्वेष को हरने । इन के इन्द्रादिक भवि जन गण रहत चरण के सरने ॥ जिन० ३ ॥ इन विन और कुलिंग जगत में भेष उदर के भरने। मानिक भव्य परखि सेवें ते शिव सुंदरि कों परने ॥ जिन० ४ ॥

४० पद--राग देश तथा ईमन ॥

अब हम सुने सुगुरु के बैना । जासूं खुले जु सम्यक नैना ॥ टेक ॥ स्वपर पिछाना भ्रमतम भाना जाना अब मत जैना ॥अव०१॥

हित अरु अहित सुनिनके कारण जानिलए सुख देना ॥ अच० २॥ कुगुरु सुगुरु वच विन पहिचाने मिथ्या भाव मिटैना ॥ अच० ३ ॥ मानिक सुगुरु सीख नौका चढ़ि क्यों कर जीव तिरैना ॥ अच० ४ ॥

४१ पद—राग देश मध्य ईमन ॥

निज आतम में रमि रहना । परसूं सनेह तजि देना ॥ निज० ॥ टेक ॥ परसों नेह हेत है दुख को सो विधि बंधन सहना ॥ निज० १ ॥ इष्ट अनिष्ट बुद्धि तजि पर में यह निज हित लखि लेना ॥ निज० ॥ सकल द्रव्य को ज्ञाता दृष्टा यह स्वभाव भजि लेना ॥ निज० ३ ॥ मानिक अपने निज स्वभाव में सदा काल थिर रहना ॥ निज०४॥

४२ पद—राग दीपचंदी ॥

तोकों यह सिख कोने दईरे । जासूं दुर्गति गैल गहीरे ॥ टेक॥ कुमति सखी सर-

आंग तजी चित कुमति कुत्रिय वसिगईरे।
क्रोध मान मद मोह छको सुधि बुधि सब
विसरि गईरे ॥ तोकों० १॥ अनरथ कर्म क-
रतन हटत पग पंच पाप दुख मईरे। कुगु-
रादिक सेवे निशि बासर सत संगति तजि
दईरे ॥ तोकों० २॥ हित अरु अहित सुतिन
कारण में भर्म बुद्धि परनई रे। ख्याति
लाभ पूजा कीरति की चाह भई नित नई
रे ॥ तोकों० ३ ॥ तातें अब कुचालि तजि
मानिक भजि जिन वृष सुख मईरे। वीती
ताहि विसारि वावरे अव तूं राखि रहीरे
तोकों० ४ ॥

४३ पद—राग कलांगड़ा ॥

करले सम्हाल अपनी-तूं छांड़ मोह की
झपनी ॥ टेक ॥ तूं तो चिन्मूरति ज्ञाता-
क्यों पुद्गल के रसराता। यासूं तेरा क्या
नाता तजि राग द्वेष का तांता ॥ कर० ॥

ये विषय भोग दुखदाई-देहैं नरकगति भाई। भोगत तूं नाहिं अघाई इन छांड़ि भजो जिनराई ॥ कर० २॥ सुत मात तात परिवारा-सब स्वारथ का संसारा। इन काज करत अघ भारा क्यों बूड़त भवदधि पारा ॥ कर० ३ ॥ तन धन कूं तूं अपना वे सो दगा देय खिर जावे। सो तो परगट दिख लावे-क्यों नहिं भ्रम भूल भगावे ॥ कर०४॥ कुगुरादिक के संग राचा मिथ्यात महा मद माचो। तासें गति गति में नाचा-इन त्यागि धर्म गहि सांचो॥ कर०५ ॥ यह सुगुरु सीख उर धरले-श्री जिनवर देव सुमिरिले। निज कारज कूं अब करले-मानिक हित पंथ पकरले॥ कर० ६ ॥

४४ पद-राग देश ॥

ज्ञानी रत नांहीं परसों दिन रतियां रे

॥ ज्ञानी० टेक ॥ ज्ञान विराग शक्ति कौं धारे निज परणतियारे ॥ ज्ञानी० १ ॥ ज्यौं व्यभिचार निप्यार यार सों भरता मांहिं विरतियारे । पंकज रहे पंक माहीं पय नहीं परसतियारे ॥ ज्ञानी० २ ॥ उदय चरित्र मोह वर बसतें व्रत नहीं रतियारे । कर्म शुभा शुभ उदय मांहिं नहिं हर्ष अरतियारे ॥ ज्ञानी० ३ ॥ भोग बिलास करत न धरत ममता निज छतियारे । भव तिथि घटत बढ़त प्रबोध शशि भ्रम तम विनशातियारे ॥ ज्ञानी० ४ ॥ देव धर्म गुरु तत्व निजातम तन मन बतियारे । सरधा धरत हरत अघ मानिक गुनसुमिरतियारे ॥ ज्ञानी० ५

४५ पद—राग गौड़ मल्हार ॥

क्यों घरडारी कुमति कुनारी चेतनराय अनारी ॥ टेक ॥ या प्रसंग चहुंगति भट-

काये पाये दुख अतिभारी ॥ क्यों० १ ॥
त्रभुवन पति पद छांड़ि आपनो क्यों हो
रहे भिखारी । दुखी भये विन लाज मरत्त
हो सुधि बुधि सबै विसारी ॥ क्यों० २ ॥
अब अपनो बल आप सम्हारो निज पौ-
रुप विस्तारी । मानिक सुमति कहत तजि
दुरमति भजि जिन पति सुखकारी ॥क्यों०॥३

४६ पद-राग झझोटी काफी मिश्रगति में ॥

भव्य सुनो एक सीख सयानी । काज
करो इमि नित हित दानी ॥ टेक ॥ युगल
घड़ी भ्रम भाव नासिकें प्रगटा के चैतन्य
निसानी । भव्य० १ ॥ ज्ञान सुरूपी को सु-
ज्ञान करि ताही को ध्यान धरो सुखदानी।
इत्यादिक कौतूहलकरि भरि जन्म पि-
यो ज्ञानामृत पानी ॥ भव्य०२ ॥ तजि भव
वास वसहु शिव वास विनासहु मोह नृ-
पति रजधानी । मानिक इमि पुरुपारथ

साधत जीवत काल अंत विन प्रानी ॥भव्य०३॥

४७ पद—राग टप्पो झंझोटी को ॥

एरे तेंने नाहक जन्म गमायो रे ॥टेक॥ गर्भवास नवमास सहे दुख सुनता नाहिं लजायोरे ॥ एरे० १ ॥ बालापन ख्यालनिमें खोयो रुदन करत दुःख पायोरे । तरुणपने विषयनि वश निशि दिन तरुणीं सों चित लायोरे ॥ एरे० २ ॥ काम क्रोध छल लोभ मोह करि बहु विधि पाप कमायो रे। कै कुसंग लगि कुगुरुनि तें पगि निज हित नाहिं सुहायो रे ॥ एरे० ३ ॥ गृह कारण विरधापन में तृष्णा वश ह्वै विललायोरे। मानिक सुगुरु सीख अजहूं भजि होय बहुरि पछितायो रे ॥ एरे० ४ ॥

४८पद—राग जोगिया ॥

यम आनि कंठ जब घेरा जीव तब कोई नहीं रक्षक तेरा ॥ टेक॥ सब कुटुंब स्वारथ

को साथी भीर परें नहीं नेरा । तिनके हेत करत अघ भाई होयगा नर्क वसेरा ॥ जीव० १ ॥ हरि हर इन्द्र चन्द्र आदिक सब भये हैं काल के चेरा । कहु तोकों कैसे राखेंतिन कीनो पर भव डेरा ॥ जीव० २ ॥ नय उप-चार पंच पद सरनो गहिले अब मन मेरा निश्चय आप सरनों गहि मानिक जो होवे सुरभेरा ॥ जीव० ३ ॥

४९ पद-राग जोगिया ॥

जीव लखि सम्यक नैन निहारी तजि भर्म वुद्धि दुख कारी ॥ टेक ॥ अध्रुव तन धन अध्रुव परिजन अध्रुव महल अटारी। भ्रम करि सब नित्य मानत है सुधि वुधि सवे विसारी ॥ जीव० १ ॥ द्रव्य दृष्टि करि तूं अविनाशी चिन्मूरति दृग धारी । जग उपजत विनसत लखि भाई क्यों हर्षत वि-लखाई ॥ जीव० २ ॥ तातें निज सम्हाल

अब मानिक नातर होयगी ख्वारी। सब विकलप तजि थिर चित करि भजि सिद्ध अकल अविकारी ॥ जीव० ॥

५० पद—राग जोगिया ॥

जीव लखि यह संसार असारा जामें सुख नाहिं लगारा ॥ टेक ॥ द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव रूप पंच पर कारा। तामहिं भ्रमत अनादि काल तें मिथ्या भाव पसारा ॥ जीव० १ ॥ महा कठिन करि बड़े भाग्यतें आयो जगत किनारा। चूके तो फिर नाहिं ठिकाना विषम चतुर्गति धारा ॥ जीव० २॥ देव धर्म गुरु रूप परखि निज मोह भाव निरवारा। रत्नत्रय नौका चढ़ि मानिक क्यों न होहु भव पारा ॥ जीव०३॥

५१ पद--राग भैरो॥

भवि जन सब विकलप तजि निशदिन

जिन मंदिर कों धावो। मनुष जन्म अति दुर्लभ पायो सो क्यों वृथा गमावो ॥टेक॥ श्री जिनेन्द्र को जजन भजन करि दुर्गति वंध नसावो। कै जिन आगम पठन श्रवण करि मिथ्या भाव मिटावो ॥ भवि० १ ॥ कै जिन गुण स्तोत्र पाठकरि सकल कुभाव गमावो। कैसाधार्मिन सों चरचा करि वि-षय कषाय घटावो ॥ भवि० २ ॥ हित के कारण देव धर्म गुरु ग्रंथ परखि उरलावो। कुगुरादिक नित अहित हेत लखि तिन के पास न जावो ॥ भवि० ३ ॥ ऊहापोह करो वहु श्रुततें चित प्रमाद छुटकावो। धरहु धारना तत्वनि की निज अनुभव करि सुख पावो ॥ भवि० ४॥ सप्त क्षेत्र धन खरच क-थन सुनि उर आनंद उमगावो। कृत का-रित अनुमोद भाव करि वहु सुकृत उपजा-वो ॥ भवि० ५॥ या कलि मांहिं यही शिव

कारन ओर न बनत उपावो । मानिकचंद यहो अनुक्रम सों भव समुद्र तरि जावो ॥ भवि० ६ ॥

५२ पद--राग भैरों ॥

परमारथ पथ कों जे ध्यावें ते जग धन्य कहावें ॥ टेक ॥ मिथ्यातम निरवारि धारि दृग सम्यक् तत्व जु पावे । सम्यक्ज्ञान प्रधान पवन बल भ्रम बादर विघटावे ॥ पर० १ ॥ देव शास्त्र गुरु भक्ति करत पै शुभ फल कों नहिं चावे । भोगत भोग उदास रहत नित चित्त बैराग वढ़ावे ॥पर०२॥ सकल पदारथ में निर्ममता शाम्यभाव उर भावे । जिन सिद्धान्त परम उपवन में मन मर्कट बिरमावे ॥ पर० ३॥ नय निश्चय व्यहार दुहुनि करि निज परतत्व दृढ़ावे । ज्ञानानंद सुधारस पीकर पूरव कर्म झरावे ॥पर०४॥ सर्व द्रव्यतें भिन्न आप कों आप

मांहिं निवसावे। ज्यों पंकज निन रहन पंक में पै अलिप्त विकसावे ॥ पर० ५ ॥या भुवि मंडल मांहिं सुतेजन जीवन मुक्ति कहावें। मानिक तिन के गुण चितारिकें हाथ जोरि शिर नावें ॥ पर० ६ ॥

५३ पद—दादरा ॥

जिन मत परखो रे भाई। जाके परखत भ्रम मिटि जाई ॥ टेक ॥ नय प्रमाण निक्षेप न्याय करि परखत भ्रम मिटि जाई॥१॥ विन परखें जीवादि तत्व को भेद न परत दिखाई। यथा अंध सिंधुर गहि झगड़त वस्तु स्वरूप न पाई ।२॥ काल दोप तें जिन मत मांहीं नाना भेप वनाई। ज्ञान विराग रूप तजि जिन मत विपय कपाय वढ़ाई ॥ ३ ॥ पचेन्द्री सेनी आरज है सीख उई चतुराई। जिन मत परखन कों हैं मूरख

करनी सकल गमाई ॥ ४ ॥ देव धर्म गुरु ग्रंथ परखि पुनि तजि प्रमाद दुखदाई। जिन वृष शुद्ध भजो अब मानिक फेरि न भव भटकाई ॥ ५ ॥

५४ पद—राग भैरों तथा झफोंटी ॥

शिव सरूप परमातम जे भवि गुण पर्यय युत ध्यावें। तिनकी कर्म कालिमा विनसे परब्रह्म हो जावें ॥टेक॥ रहित सप्त भय तत्त्वारथ में नेक न संशय लावें। सम्यग्ज्ञान प्रधान भान बल भ्रम तम घान नसावें ॥ शिव०१॥स्वपर भेद विज्ञान करत वा निज में निज विरमावें। सुख दुख में न विषाद हरष चित नित वैराग्य बढ़ावें ॥शिव० २॥ संवर निर्जर हित स्वरूप श्रीगुरु उर ध्यान लगावें। मोह छोह विन शाम्य भाव चित धर्म उपादेय भावें ॥ शिव० ३ ॥ आस्रव बंध वि-

भाव दुःखमय हेय जानि कुटकावें। यह विधि सों दृढ़ धरत तत्व रुचि शिव प्रिय चित ललचावें॥ शिव० ४॥ ख्याति लाभ पूजा कीरति की चाह न चित्त सुहावें। मैत्री आदिक चार भावना भावत चित हुल-सावें॥ शिव०॥ ५॥ तारन तरन भवोदधि के जग जैनी सत्य कहावें। जयवंते वर्ता ते मानिक स्वहित हेत यश गावें॥ शिव० ६॥

५५ पद—राग सोरठ दीपचंदी ठुमरी॥

आतम जानोरे भाई—जाके जानत भ्रम मिटिजाई॥ आत०॥ टेक॥ परश गंधरस वर्ण विवर्जित सहित सुगुण परजाई। व्यय उत्पाद ध्रौव्य सत युत पै इन्द्रिनि करि न लखाई॥ आत० १॥ चौखूंटो न तिखूंट गोल नहिं शब्द रहित पुनि गाई। है चित पिंड अखंड ज्ञान घन अनुभव गम्य बताई

॥ आत०२॥ जाको पद जग पूज्य जगोत्तम जामें जग झलकाई। स्वपद विसारि राचि पर पद में दुखिया होत अघाई ॥आत०३॥ जब अपनो बल आप सम्हारे डारे विकल पताई । मानिक तब शिव महल में बासी सुख अनंत बिलसाई ॥ आत० ४॥

५६ पद—राग दादरा जिला ॥

तन धनरे दगा दिये जाय ॥ टेक ॥ सन्ध्या समय अरुण अंबर ज्यों चपला चमकि पलाय रे ॥ तन० १॥ सम्यक् दृग करि निरखि सयाने यह पुद्गल परयाय ॥तन०२॥ पूरब सुकृत करि यह ठहरत यतन करें न रहाय रे ॥ तन० ३ ॥ जाके हेत करत अघ भाई लहे कुमति दुखदाय॥ तन० ४ ॥ धन सुक्षेत्र विन तन तप करि ज्यों होवे सुर शिवराय ॥ तन० ५ ॥ छिन उपजत छिन छिन में विनसत जाको यही सुभाय ॥तन०६॥

मानिकचंद कहत आपुन सों औरनि कों समझाय ॥ तन० ७ ॥

५७ पद–राग देश ॥

निज निधि कारो नहीं जोय हो त्रिभुवन के ज्ञाता हो ॥ टेक ॥ तेरी निधि दृग ज्ञान चरणमय सो निज में अवलोय ॥ हो त्रिभु० १॥ निज विधि के जाने विन जग में बहुत दुखी तूं होय ॥ हो त्रिभु० २ ॥ पर गुण रचि पराश्रित ह्वैकें दियो है अपनप्यो खोय ॥ होत्रिभु० ३॥ तातें पर तजि निज भजि मानिक निरआकुल सुख होय ॥ हो त्रिभु० ४॥

५८ पद–दुमरी देश ॥

जियरा भयो विरागी रे हो नेमि जीसों सुरति मेरी लागी ॥ टेक ॥ घर कुटुंब से काज नहीं निज परणति जागी रे ॥ जियरा० १॥ जग असार लखि पशु पुकार सुनि हमकों त्यागी रे । चढ़ि गिरनारि धरि चरित भार

आतम लौ लागीरे ॥ जियरा० २ ॥ आपु पगे शिवरमनी से हम प्रभुगुण पागी रे। मानिक नेम चरण भजि राजुल भई वड़ भागीरे ॥ जियरा० ३॥

५९ पद—राग होरी ॥

हृदय छवि वस गई श्री जिन प्यारी यह तो सुर नर गण मनहारी ॥ टेक ॥ अनंत ज्ञान दृग सुख वीरजमय अनंत चतुष्टय धारी। तुम मुख चन्द्र वचन किरणावलि लोकालोक उजारी ॥ हृदय० १ ॥ शांति स्वभाव साधि शिवपथ कों भये अविचल अविकारी। मानिक श्री जिन चरन कमल पर मन बच तन वलिहारी ॥ हृदय० २ ॥

६० पद—राग भैरवी टप्पो ॥

एजी म्हारी अरज श्री जी म्हारी अरज सुनि लीजो जी त्रिभुवनपाल॥ टेक॥ आदि

काल तें मोह शत्रु ने डालि दियो भ्रमजाल ॥ १ ॥ निज धन मेरा लूटि लियो है कियो बहुत बेहाल । मानिक चरन शरन गहि लीनो कीजे वेगि निहाल ॥ २ ॥

६१ पद--राग सोरठ ॥

शिव रमनी जादू डारा—वैरागी भयो प्रभु म्हारो ॥टेक॥ तोरनतें रथ फेरि दियो प्रभु पशू फंद निरवारो ॥ शिव० १ ॥ अध्रुवादि भावन भावत लौकांतिक सुयश उच्चारो । भूषण वसन डारि गिरि ऊपर पंच महाव्रत धारो ॥ शिव० २ ॥ पंच समिति त्रय गुप्ति सखिनि युत सुख वारिधि विस्तारा । निजानंद अनुभव रस में छकि विषय गरल वमि डारा ॥शिव० ३॥ काज होय विन के ढिंग सजनी उन विन कोई न हमारो। मानिक जग असार लखि करि

रजमति पति शरण विचारो ॥ शिव० ४॥

६२ पद—राग झंझोटी धीमा तिताला ॥

जगत त्रय पूज्य लखो जी जिन चंद ॥ टेक ॥ परम शांति मुद्रा के निरखत ही उपजत परमानंद ॥ जगत० १॥ अनंतज्ञान दृग सुख वीरजमय भविक मोद सुखकंद ॥ जग० २ ॥ जासु ज्ञान जोतिप्ना प्रसरत फटत अनृत तम खंड ॥ जग० ३ ॥ मानिक नैन चकोर लखत चित रटत कटत भवफंद ॥ जग० ४ ॥

६३ पद—राग पिल्लू दादरा ॥

जादों रायरे दगा दियें जाय ॥ टेक ॥ छप्पन कोटि युत व्याहन आये हर्ष हिये न समाय ॥ जादों० १ ॥ पशू छुड़ाय गये गिरि कों प्रभु अब कहा करों उपाय ॥ जादों० २॥ शिव रमनी सिद्धन की नारी ताने

लिये भरमाय ॥ जादों० ३ ॥ राजुल मानिक जग असार लखि प्रभु मग लागो धाय॥जा०४॥

६४ पद—राग ठुमरी सोरठ ॥

राजुल जिय में करत विचार—ठाढ़ी उग्र सेन दरबार ॥ राजु० टेक ॥ शुभ अरु अशुभ उदय कर्मादिक यह कीनों निरधार ॥ राजु० १ ॥ छप्पन कोटि जादों युन व्याहन आये नेमिकुमार । पशू निहारि विचारि अथिर जग जाय चढ़े गिरनार॥राजु०२॥ काकी मात बाप काको सुत काको है परिवार । काको तन धन काको यौवन झूठा जग व्योहार ॥राजु०३॥ तातें अब प्रभु पास जाय कें कीजे तत्व विचार । मानिक तजि दुरमति शुभमति सजि रजमति भजि भरतार ॥ राजु० ४ ॥

६५ पद राग देश

आली मेरो नाथ भयो वैरागी ॥ टेक ॥

हमको तो कछु दोष नहीं ये कौन गुन हमको त्यागी ॥ आली० १ ॥ आप पगे शिव रमनी सों ये हमतो प्रभु गुनपागी। मानिक तप धरि घर तजि रजमति प्रभु ही के सग लागी ॥ आली० २ ॥

६६ पद—दादरा

सतगुरु कीनो पर उपकार—ये जिया दुःखम काल मझार ॥ टेक ॥ गुरुप्रसाद दुर्लभ निज निधि में पाई अति सुखकार ॥सत०१॥ सप्तभंगमयवाणी प्रभु की झेली जो गणधार। ताही क्रमतै वहु मुनिगण स्रुत रचे स्वपर हितकार ॥ सत० २ ॥ जिन के पठन स्रवण करते मिटि जात भरम अंधियार। स्वपर भेद की बुद्धि होत उपजत अनुभौ सुखसार ॥सत०३॥ केवल स्रुत केवल ह्यां नांहीं मुनिजन गण न लगार।

मानिक श्रुत सरधान धरत ते होत भवो दधि पार ॥ सत० ४ ॥

६७ पद-रसिया ॥

धनि शैली शिव पुर गैली है ॥ टेक ॥ जामें नित श्रुत पठन श्रवन हू जिन जजन भजन विधि फैली है ॥ धनि०१॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म खण्डनी ज्ञानादि स्वगुण की थैली है ॥ धनि० २ ॥ जामें भवि चरचा नित जल्पत तिनकी मति होत न मैली है ॥ धनि० ३॥ मानिक यह जयवंतो जग में कलि में शिव रमनि सहेली है ॥ धनि०४॥

६८ पद-रसिया

भज नेमीश्वर शिव सुखकारी॥ टेक ॥ छपन कोटि युत व्याहन आये चित पशुअनि की करुणाधारी ॥भज० १॥ राजपाज सब परिजन छांडे जिन छांड़ दई राजुल नारी ॥ भज० २ ॥ चढ़ि गिरिनारि ध्याय

निजआतम जिन पायो निज पद अवि-
कारी ॥ भज० ३ ॥ शिव रमणी बर तासु
चरण पर मानिक मन वचतन वलिहारी॥
भज० ४ ॥

६९ पद—दादरा देश ॥

हो मेरे स्वामी तूं निज घर आउ ॥टेक॥
पर घर कुमति कूर संग भटको अब मत
भूले जाउ ॥ हो०१ ॥ नर भव सुकुल सुथल
तें पायो फिरि ऐसो नहीं दाउ ॥ हो० २॥
रत्न त्रय निज निधि तेरे घर विलसो त्रिभु
वन राउ ॥ हो०३॥ सुमति सीख अजहूं भज
मानिक अचल सुघर सुख पाउ ॥ हो० ४॥

७० पद—देश में ॥

हम तो अब निज घर कों आये ॥टेक॥
भेद विज्ञान भान परकाशत भ्रम तम घा-
न नशाये ॥ हम० १ ॥ निज घर के जाने
बिन जग में घर घर भ्रम दुख पाये। काल

लखिय चल सत संगति ने निज घर खघर दिखाये ॥ हम० २ ॥ अहित हेतु कुगुरादि परखि के दूरी तें छुटकाये। हित के कारण सुगुरु देव श्रुत निशदिन चित में भाये ॥ हम० ३ ॥ परखे हेयाहेय हृदय दृग जिन आज्ञा शिरलाये । मानिक शैली निजघर गैली लखि भविजन नित ध्याये ॥ हम० ४ ॥

७१ पद राग सारंग ॥

सम्यक् शैली के लोग शांति रस भींजन लागे ॥ टेक ॥ दृढ़ सरधान धरन तत्वनिको विन शंका त्रय योग ॥ शांति० १ ॥ सुगुरु देव श्रुत चित चाहत नित कुगुरादिक को वियोग । हेयाहेय परख जिनके घट करन स्वानुभव भोग ॥ शांति० २ ॥ भ्रम तम हर विज्ञान दिवाकर जनि घट उदित मनोग । भोगत भोग उदास रहत नित निर विक-

रुप उपयोग ॥ शांति० ३ ॥ जे शिव मारग मांहि रमत विधि फल तें हरप न सोग। मानिक तिन को संग करत मिटि जात भ्रमण भवरोग ॥ शांति० ४ ॥

७२ पद– राग देश ठुमरी ॥

ज्ञानी तेनें परसें प्रीति लगाई ॥ टेक ॥ तूं चिद्घन पर जड़ सें राचो चित में नांहिं लजाई ॥ ज्ञानी० १ ॥ पर की प्रीति रीति विपता की छिन में मिलि बिछुराई। पर कों तो कछु दोष न ज्ञानी तो परणति दुखदाई ॥ ज्ञानी० २॥ भ्रम मद छाकि थापि निज पर में अहंबुद्धि उपजाई। भववन में बहु कष्ट सहेतें सो सुधि क्यों बिसराई ॥ ज्ञानी० ३ ॥ निज स्वभाव तजि बहु दुख पायो मानिक मन वचकाई। पर की प्रीति तजो सुभ जो निज सत गुरु यों फरमाई ॥ ज्ञानी० ४ ॥

५३ पद—गज़ल ॥

छवि वीतराग की मेरे उर में समा रही।
दृग बोध वीर्य शर्म मई दृग में छारही
॥ टेक ॥ नासाग्र दृष्टि धरें करें वर विरा-
गता। सुख वारिध विस्तारवे को चन्द्र है
यही ॥ छवि० १ ॥ वर शुद्ध सुआसन धरें
अनुभौ सुरंग रंगी। शिव पंथ के लखाव
ने को दीपिका यही ॥ छवि० २ ॥ जाके
स्वगुण पर्यय याबे समा रहे। निज आ-
तम दर्शावने को आरसी यही ॥ छवि० ३ ॥
छवि देखि दर्प कोटि हू कंदर्प का गया।
मिथ्यात्व तम नशावने को मित्र है यही
॥ छवि० ४ ॥ नागेन्द्र सुर नरेन्द्र मुनि गणेन्द्र
भी ध्यावें। विज्ञान वीतरागता का हेतु है
यही ॥ छवि० ५ ॥ यह मानिक उर मांहीं
निश्चे हुआ है आज। भव सिंधु के तरन
को जलयान है यही ॥ छवि० ६ ॥

७४ पद-राग झंझोटी ॥

प्रभु थाकी छवी पे मैं वारी ॥ प्रभु० टेक॥ वीतराग विज्ञान भावमय पर्म शांति मुद्रा धारी ॥ प्रभु० १ ॥ नाशा अग्र दृष्टि कों धारें भवि सुर नर मुनि गण मनहारी ॥ प्रभु० २ ॥ अनुभव रस झलकत मुख पुलकित मानो बचन कहत आनंदकारी ॥ प्रभु० ३॥ धारि अनुराग विलोकत मानिक ते पावत पद अविकारी ॥ प्रभु० ४ ॥

७५-पद दादरा कलंगड़ा में ॥

सुनि लीजो मेरी टेर कर्मनि ने मोहि घेरो ॥ टेक ॥ कर्म शत्रु ने भव भव मांही दीनो है दुःख घनेरो ॥ सुनि० १ ॥ रत्नत्रय निज धन मेरो हरि करि लीनो मोहि चेरो ॥ सुनि० २ ॥ तुम हो दीनदयालु जगत गुरु मोतन क्यों नहीं हेरो ॥ सुनि० ३ ॥ शरण

गहो मानिक मन वच तन अब कीजे निर वैरो ॥ सुनि० ४ ॥

७६ पद—राग पिलू ॥

तेरी मति हीनरे जिय तेरी मति हीन ॥ टेक ॥ निज बल तेरो कर्म शत्रु ने अनचीनो कर दीन । तातैं तोहि कछू सूझत नाहीं भयो जगत में दीन ॥ रे जिय० १ ॥ परही कों जाचत परहीं से राचत पर मय आपेको कीन । तूं सुखमय यों दुखी होत ज्यों जल बिच प्यासो मीन ॥ रे जिय० २॥ करि पौरुष भ्रम भाव छांड़ि लखि सम्यक् रत्न सुतीन । सुगुरु वचन सरधा धरि मानिक निज गुण होउ स्व लीन ॥रे जिय ०३॥

७७ पद—दादरा ठेका ॥

हृदय जिन मूरति रही ये समाय—एजी और कछू न सुहावै मन में ॥ टेक ॥ नि-

विकार निरद्वंद निरामय सहजानंद सु-
भाय ॥ हृदय० १ ॥ सकल द्रव्य निरखे पुनि
जाने पैं परसें नहीं जाय । स्वच्छ सुच्छद अ-
मंद ज्ञान घन ज्यों दर्पन झलकाय ॥ हृदय
॥ २ ॥ बंध मोक्ष बिन शुद्धा चल ध्रुव गुण
अनंत परजाय । द्रव्य कर्म नो कर्म भाव
बिधितें बिलक्ष दरशाय ॥ हृदय० ३ ॥ अ-
व्या बाध अखंड अनाकुल सुख मय त्रिभु-
वन राय । अनुभव दृग निरखत ये मा-
निक तिनहीं को प्रगट दिखाय ॥ हृदय० ४ ॥

७८ पद—राग झंझोटी को बना ॥

नेमि नवल बनि आयोरे बना उग्रसेन
नृप को नगरी में ॥ टेक ॥ शीस मुकट सु-
लियों का सेरा इन्द्रादिकसंग लायोरे बना
॥ उग्र० १ ॥ अशरण पशु आक्रंदन लखि
कें उर विराग झलकायो रे बना ॥ उग्र० २ ॥

मोर मुकुट कर कंकन तोरे गिरितन रथ फिरवायो रे बना ॥ उग्र० ३॥ रज मति तजि भवि सिद्ध निरंजन स्यातम ब्रह्म रुचि लायो रे बना ॥ उग्र० ४॥ भवि जन नारि जारि विधि गण शिव तिय सों नेहा लगायो रे बना ॥उग्र०५॥ शिव रमनी वर लखि कें मानिक मन वच तन शिर नायो रे बना ॥ उग्र०६॥

३९ पद—राग होरी काफी ॥

विनती सुनियो यदुराई तुम्हरे में शरने आई ॥ टेक ॥ छप्पन कोटि सजि व्याहन संग ले कृष्ण हली दोऊ भाई । अशरण पशु आक्रंदन लखिकें चित करुणा उपजाई॥ बहुत वैराग बढ़ाई ॥ विन० १ ॥ सम दृष्टि जैसे पिता छांड़ि छोड़ी शिव देवी माई । भुवि मंडल को राज छांड़ि के पशु अनि बंदि छुड़ाई ॥ फेरि रथ गिरि कों जाई ॥ विन० २ ॥ भूषण वसन डारि गिरि क-

पर ध्यान धरो चिद राई । जग असार ल-
खि हमकों छांडो शिव रमनी मन भाई ॥
हमारी सुधि हु न आई॥ विन० ३ ॥ अथिर
जगत में सार न दीखे गति गति भ्रमन
दुखाई । हो तुम नाथ त्रिलोकपती सब
जानत पीर पराई ॥ कहा कहिये समझाई
विन० ४ ॥ मैं इक मित्र मलिन तन में
मेरी निर्मल जोति छिपाई । कर्म शुभाशुभ
आवत भ्रम तें तसु फल है दुखदाई ।.नाथ
मोहि लेउ छुडाई ॥ विन० ५ ॥ भेद ज्ञान
भ्रम हानि लोक में निज स्वभाव सुखदाई ।
बोध दुर्लभ पायो नहीं कबहूं तुम हो शरण
सहाई ॥ मोहि अब लेउ अपनाई ॥विन०
॥ ६ ॥ बार बार चिंतत इमि राजुल प्रभु
हो के मग धाई । शीस नवाइ चरण गहि
लीनोअब मोहि तार गुसांई॥कहा इतनी नि-

ठुराई ॥ चिन० ७ ॥ मौन खोलि के दीनी है दिक्षा हितकारी सखो सुनाई। मानिक चंद धन्य दंपति पर सुर नर मुनि वलि जाई ॥ स्वहित जिन स्तुति गाई ॥ चिन०८॥

८० पद—होली दीपचंदी ॥

दई कुमती मेरे पिउकों कैसी सीख दई ॥ टेक ॥ स्वघर छांड़ि पर हो संग राचत नाचत ज्यों चकई ॥ दई० १ ॥ रत्न त्रय निज निधि ठगाय कें जोड़त कर्म खई । रंक भये घर घर डोलत अब कैसी विधि निर्मई ॥ दई० २ ॥ यह कुमती मेरी जनम को वैरिन पिय कीने अपनई । पराधीन दुःख भोगत भोंदू निज सुधि विसरि गई ॥ दई० ३ ॥ मानिक सुमति अरज सुनि सत गुरु तुमतो कृपा मई। बिछुड़े कंथ मि-लावहु स्वामी चरण शरण में लई ॥दई० ४॥

८१ पद—राग होली दीपचंदी ज़िला पिलू ॥

सुघर सइयां मानों बात हमारी तजि कुमति कुनारी ॥ चतुर० ॥टेक॥ कुटिल कुरूप लगी परसें नित वंध वढावन हारी ॥ तजि० १ ॥ सकल कुभाव कुरंग छिरकत नित लोकलाज तजि सारी । पाप कीच वहु भांति लपेटें देति वदन पर डारी ॥ तजि०२॥ चक्षुहीन को ज्यों जग डोले बोले अति दुख कारी । या प्रसंग गति गति दुख पायो फिर तासों क्या यारी ॥तजि०३॥ मो विनती पिय मान सयाने नातर होयगो ख्वारी । मानिक स्वघर आउ हठ तजि भज सुमति सीख सुखकारी ॥तजि० ४ ॥

८१ पद—होली दीप चदी ज़िला पिलू ॥

पर परणतिसों रति मानी रे मदमातो लंगर ॥ टेक ॥ पर परणति मय आप जानिके निज निधि नाहिं पिछानी रे॥ मद०

१॥ इष्ट अनिष्ट हेतु पर कों लखि हर्ष विषाद जु ठांने रे ॥ मद० २ ॥ या प्रसंग निज दुखी होत है दुख कों सुख करि जाने रे ॥मद० ३ ॥ भ्रम तजि निज परणति भज मानिक सुमति सुसीख बखानेरे ॥ मद०४॥

८२ पद-होरी दीपचंदी तिताला ॥

सुघड पिया आये हमारी ओरी चेतन कुमति कुनारि त्यागि कें ॥ टेक॥ काल लब्धि यह ऋतु बसंत सें आनंद ठान रचोरी॥ चेत० १ ॥ मिथ्या कुरंग निवारि सार दृग केसर रंग छिर कोरी । सम्यक ज्ञान अमल वर चारित चोवा अंग चरचोरी ॥ चेत० २॥ स्वकथा नाद अलापन स्वर भरि स्यात् पद मुरज सजोरी ॥ आज वियोग कुमति सौतिन के हमरो मन हरखोरी ॥ चेत० ३ ॥ धन्य दिवस निज पति संग मानिक सुमति

सखी खेले होरी । अनुभव फाग रचावत दं पति चिरजीवो यह जोरी ॥ चेत० ४ ॥

८३ पद— राग झंझोटी दीपचंदी ॥

मोह वारुणी पी अनादितें पर घर धूम मचावे रे जिया ॥ टेक ॥ कुमति कुरमिनि ठगनि ठगि लीनो निज घर चित नाहिं सुहावे रे जिया ॥ मोह० १ ॥ परही से राचत पर संग नाचत पर परणति अपनावेरे जिया ॥ मोह० २ ॥ पर करि दुखी सुखी पर हो करि इमि विभाव उपजावेरे जिया ॥ मोह० ३ ॥ इन्द्रिय विषय सुःख करि माने दुरगति के दुख पावेरे जिया ॥ मोह० ४ ॥ मानिक सुमति कहति धनि सतगुरु भूले कों राह वतावेरे जिया ॥मोह० ५॥

८४ पद—राग ठुमरी झंझोटी ॥

जिन धुनि सुनि दुरमति नसिगई रे नय स्याद्वाद मय आगम में ॥ टेक ॥ निभ्रम

सकल तत्व दरशावत यह तो भविजन के मन वशि गईरे ॥ नय० १ ॥ चिर भ्रम ताप निवारण कारण चन्द्र कलासी दरश गईरे ॥ नय० २ ॥ अघ मल पावन कारण मानिक मेघ घटासी वरसि गईरे ॥ नय० ३ ॥

८५ पद—राग देश तथा पिलू ॥

दृग भरि देखे महाराज थेजी म्हारोरोम रोम तन हरखो ॥ टेक ॥ दोषा वर्ण रहित सब ज्ञायक तीन भुवन शिरताज ॥ दृग०१॥ चिर मिथ्या भ्रम भूलि मिटी मैंने निजनिधि पाई आज ॥ दृग० २ ॥ आकुल ताप मिटी ततछिनही पायो सुख सामाज ॥दृग० ३ ॥ मानिक धन्य भाग्य धनि वासर आज सफल भये काज ॥ दृग० ४ ॥

८६ पद—राग देश तथा पिलू ॥

जीरा नहीं माने माय श्री नेमिजिनवर जिन देखें ॥ टेक ॥ छपन कोटि जुत ब्याहन

आये हर्ष हियें न समाय ॥ जीरा० १ ॥ पशू छुड़ाइ गये गिरि कों प्रभु अब तो कछू न वशाय ॥ जीरा० २ ॥ शिव रमनी सिद्धन की नारी तिन लीने बहकाय ॥ जीरा० ३ ॥ मानिक निज हित लखि रजमति प्रभु के मग लागी धाय ॥ जीरा० ४ ॥

८७ पद—राग देश ॥

म्हाने क्यों न तारो राज म्हानें क्यों न तारो । अब मैं शरणा लीनो थारो राज ॥ म्हाने० ॥ टेक ॥ तुम तो अधम अनेक उधारे तिन पायो पद अविकारो राज ॥ म्हाने० १ ॥ दुष्ट कर्म ने भव भव मांहीं हमरो काज बिगारो राज ॥ म्हाने० २ ॥ तारण तरण बिरद सुनि आयो मोतन नेक निहारो राज ॥ म्हाने० ३ ॥ मानिक मन वच शरण लयो है कर्म फंदा निरबारो राज ॥म्हाने०४॥

८८ पद–राग विलावल ॥

अचिरज लागे हो भारी लखि महिमा श्रीजिन थारी ॥ टेक॥ वीतराग जिन नाम धरायो प्रचुर राग करतारी ॥ अचि० १ ॥ निज त्रिय त्यागि वसे बन में फिर क्यों परणी शिवनारी ॥ अचि० २ ॥ परम शांति रस भीनी मूरति विधि गण क्यों क्षयकारी॥ अचि० ३ ॥ अनुपम वर अद्भुत महिमा पर मानिक नित बलिहारी ॥ अचि० ४ ॥

८९ पद–रेखता कवाली ॥

कभी लखते मुझे निज भाव नजर आता है। जैसे प्रति विंबकों जु आरसी झलकाता है ॥टेक॥ विश्व के तत्व सबी निज गुण पर्यय समेत ज्ञान अति स्वच्छ में इकवार समाजाता है ॥ १ ॥ भिन्न परभाव तें सदा स्वभाव में ही मगन यही अतिशय नही

परभाव को सताता है ॥ २ ॥ शांति रस मांहिं मगन है सदा आनंद मई मेरे भ्रम दाघ को छिन मांहिं वो बुझाता है ॥ ३ ॥ राग विन नाम प्रभू मानिक वैराग करो हरो विधि जाल सदा होवे महा साता है ॥ ४ ॥

९० पद-ठुमरी खम्माच ॥

सखीरी मैं तो जाउंगी नेमि प्रभु पास ॥टेक॥ जग बिकार दव झालसी लागे उर वैराग्य प्रकाश ॥ सखी० १ ॥ घर कुटुंव से काज नहीं हैं लागो दरशन की आश ॥ सखी० २॥ मानिक राजुल प्रभु पर जाचति दीजे म्हाने अविचल वास ॥ सखी० ३ ॥

९१ पद-ठुमरी ॥

मैं भी चलों थारे साथ नेमि जी सुनियो टेर हमारी हो ॥ टेक॥ जग नासो विन शरण भवोदधि में वूड़त मझधारी हो। मैं इक भिन्न मलिन तन ने मेरी निरमल

जोति विगारी हो ॥ मैं भी० १ ॥ भर्म भाव अवरोध हेत वर शाल्य भाव सुखकारी हो। त्रिर त्रिभावना श्रिरन निर्जरा लोक स्वरूप विचारी हो ॥ मैं भी० २ ॥ मोह छोह बिन धर्म कहा जिन बोध सुदुर्लभ कारी हो। इमि विचार चित करन स्वगृहतें निकसी राज दुलारी हो ॥ मैं भी० ३॥ मानिक प्रभु पद उरधारि राजुल समता पाश निवारी हो। प्रभु गुण माला पहर गल राजुल जाय चढ़ी गिरनारी हो ॥ मैं भी० ४॥

९२ पद-राग कलोटी को जगमा ॥

सूरत प्यारी वे दिल विच रही वे समाय ॥ टेक ॥ वीतराग विज्ञान भावमय पर मौदारिक काय ॥ सूर० १ ॥ भविजन कुमुद हेत चन्द्रोपम मर्म तिमिर विनमाय ॥ सूर० २ ॥ अनुपम शांति छवी पर मानिक मन वच तन अविजाय ॥ सूर० ३ ॥

९३ पद—राग जिला पिल्लू ॥

तुमी से नू प्रीत लगी—लगी रे मैंनू ॥ तुमी० ॥ टेक ॥ जग नायक जिन चन्द्र निरखते चिर भ्रम भूल भगी ॥ भगी० १ ॥ ज्ञान विराग हेतु वर लखि निज आतम जोति जगी ॥ जगी रे० २ ॥ तुमरी शांति छबी मानिक कें निशि दिन हिय में पगी पगी० ३ ॥

९४ पद—राग जिला पिल्लू ॥

बसी रे मैंनू जिन छवि दृगनि बसी ॥ वसी रे० टेक ॥ निर्विकार निरद्वंद अनोपम ध्यानारूढ़ लसी ॥ लसीरे० १ ॥ जाके लखत नसत रागादिक सुमति सुतिय हुलसी ॥ लसी० २ ॥ श्री जिनचन्द्र छबी भ्रम तम हर मानिक चित निवसी ॥बसी०३॥

९५ पद—ठुमरी बरवैकी ॥

तुम दरशन बिन मोइ कों कल न प-

रत जिन देव ॥ टेक ॥ जैसे रटत चकोर चन्द्रमा तैसे मेरी टेव ॥ तुम० १ ॥ मो निज हित के तुम यर कारण तारन तरन स्व- मेव ॥ तुम० २ ॥ मानिक मन वच तन कर जाचत चरण कमल की सेव ॥ तुम० ३॥

९६ पद—राग सोरठ ॥

प्रभु जी मोहि भव दधि ते तारो—म्हारो विरदोदर धारो ॥ टेक ॥ रागी द्वेषी देव सेव में दुख पायो अति भारो ॥ प्रभु० १ . तुमनों अधम अनेक उबारे पद पायो अविकारो ॥ प्रभु० २॥ यह जग जाल हैं स्वारथ को तुम बिन कोई न हमारो ॥ प्रभु० ३ ॥ तारण तरण विरद सुनि मानिक दीनो शरण तुम्हारो ॥ प्रभु० ४ ॥

९७ पद—राग सोरठ ॥

प्रभु जी मेट विभाव हमारो ॥ टेक ॥

मिथ्या तिमिर हृदय दृग छायो हित अनहित न विचारो ॥ प्रभु० १ ॥ पर अपनाय सहो दुख भारी अपनो पद न सम्हारो ॥ प्रभु० २ ॥ तुमतो परम शांति रस सागर नागर नाम तिहारो ॥ प्रभु० ३ ॥ स्वाभाविक धन जाचत मानिक की विनती अब धारो ॥ प्रभु० ४ ॥

९८ पद–दादरा ॥

श्री जिनधारी छवी मन भावे हो ॥ श्री जिन० टेक ॥ परम शांति मुद्रा के निरखत निज अनुभूति लखावे हो ॥श्री० १॥ वीत राग विज्ञान भाव मयदेखत दुरित नसावे हो ॥ श्रीजिन० २ ॥ मानिक निज हित हेत छवी लखि हरखि हरखि गुण गावे हो ॥ श्री० ३ ॥

९९ पद–रागश्री ॥

मूरति तिहारी प्रभु जी प्यारी लागी हो मोइकों॥ टेक ॥ जब सें लखी छवि शान्ति मनोहर तब सें भरम बुधि सारी भागी हो ॥ मोह०१ ॥ तुम गुण परमामृत आस्वादत निज अनुभूति कला जागी हो ॥ मोह०२ ॥ मानिक दृग चकोर निरखत छवि शशि सम वर सुखकारी लागे हो ॥ मोह० ३ ॥

१०० पद-राग सारंग ॥

मन मोहन छवि थारी हो जिन वर ॥ मन० टेक ॥ दर्श ज्ञान सुख वीर्य अनंतो अंतर विभव तुम्हारी हो ॥ जिन० १ ॥ तुम नख जोति कोटि रवि छोपे उपमा जग न निहारी हो । भामंडल भव सात दिखत हैं तीन छत्र शिर भारी हो ॥ जिन० २ ॥ चौं-सठि चमर इन्द्र नित ढोरत दीप अठारै टारी हो । दिव्य ध्वनि अक्षर विन खिरनी जग जीवन सुखकारी हो ॥ जिन० ३ ॥ दृश

जनमत दश केवल उपजे चउदश सुर कृत थारी हो । ऐसे श्री जिनवर लखि मानिक मन वच तन वलिहारो हो ॥ जिन० ४ ॥

१०१ पद—दादरा ॥

श्री जिन हो सुनों मेरी विनती ॥टेक॥ दुष्ट कर्म ने भव भव माहीं दुख दीना हो हमें अनगिनती ॥ श्री० १ ॥ अंजन आदि अधम अघ भारे तारे हो भविक अनगिनती ॥ श्री०२॥ मानिक चरण शरण गहि लीनो दीजे हो अचलपुर वस्ती ॥श्री०३॥

१०२ पद—ठुमरी जिल्ला ॥

हुइआ मैं वलिहारो हो श्री जिन थापे ॥ हुइ० ॥टेक॥ वीतराग विज्ञान भावमय वर अनंत गुण धारी हो ॥ हुइ०१ ॥ नाशा अग्र दृष्टि कों धारें वर विरागता कारी हो ॥ हुइ० २ ॥ अनुभव रस झलकत मुख पुलिकत सुर नर मुनि मन हारी हो ॥हुइ०

॥३॥ निरञ्जन दृग हरषन हिय मानिक मन वच धोक हमारी हो ॥ हुइ० ४ ॥

१०३ पद—दादरा ॥

आज मेरे नैना सफल भये लखि छवि श्री जिन की ॥ टेक ॥ वीतराग मुद्रा निरञ्जन ही मिथ्या भाव गये ॥ लखि० १ ॥ अघ मल दूरि करन कों पावन लायक ज्ञान दये ॥ लखि० २ ॥ निज हित कारण छवि लखि मानिक मन वच काय नये ॥ लखि० ॥३॥

१०४ पद—दादरा ॥

धनि सर धानी जन जिन पायो पथ निरवान ॥ टेक ॥ मिथ्या तिमिर फटो प्रगटो घट अंतर समकित भान ॥ धनि०१ ॥ मोह मई तजि शयन दशा हू जाग्रत दशा महान । सर्व तत्व को मरम लखो तिन अवाचीक भगवान ॥ धनि० २ ॥ निजको

ज्ञान तेज उधृत नित करत सुधारस पान।
निज हित हेत सुतिन के मानिक सुमिरत
गुण अमलान ॥ धनि० ३ ॥

१७५ पद—होरी दादरा कलांगड़ा ॥

मेरे ज्ञानी पिया घर आउरे ॥ टेक ॥
कुमति कुनारि भरम मदमाती याके पास
न जाउरे ॥ मेरे० १ ॥ काल लब्धि ऋतु-
राज मांहिं यह अनुभव फाग रचाउरे ॥
मेरे० २ ॥ सम्यक दृग जल नय पिचकारि-
न भरि २ नित छिरकाउरे ॥मेरे० ३॥ ज्ञान
गुलाल चरित्र अर्गजा मलि मलि अंग लगा
उरे ॥ मेरे० ४ ॥ सुमति सीख मानो पिय
मानिक फिर यह दाव न पाउरे ॥मेरे०५॥

१०६ पद—होरी काफी ॥

या विधि होरी मचावे—जवे जियरा सुख
पावे ॥ टेक ॥ श्रीजिन भवन मांहि साजन
जुत बहु विधि तूर बजावे ॥ जवे० १ ॥ त-

स्यारथ चरचाअर चोवा मलि २ अंग ल-गावे । शांति सुधारस रंग राचि करि राग गुलाल उड़ावे ॥ जवे० २ ॥ जिन आगम ध्वनि अमल पान करि मन वच तन छु-कि जावे । सुमति नारि जुत हरखि हरखि कें श्री जिन के गुण गावे ॥ जवे० ३ ॥ जि-नवर गुण वर निज स्वरूप को एक रूप दरशावे । निरमल सरधा धर्म मिठाई ग्र-हत न नेक अघावे ॥ जवे० ४ ॥ त्यागि ध्यान करते जब निज में निज विरमावे । मानिक यों वड़ भाग खेलि फिर आवाग-मन मिटावे ॥ जवे० ५ ॥

१०७ पद-दूसरी त्रिताला झंझोटी की ॥

लखि छवि वीतराग जिन की आज म्हारे आनंद उर न समावे ॥टेक॥ मिथ्या तम हर अनुपम दिनकर स्वपर भेद दर-शावे ॥ आज० १ ॥ वीतराग मुद्रा निरख-

त ही रोम रोम हरपावे ॥ आज० २॥ मा-
निक निज हित हेत छवी लखि हरपि ह-
रषि गुण गावे ॥ आज० ३ ॥

१०८ पद–ठुमरी झंझोटी ॥

स्याम सुरत घन मूरत प्रभु की लागे
म्हाने प्यारी जी ॥टेक॥ विश्वसेन नंदन जग
बंदन पद पंकज पर वारी जी ॥ स्याम०१॥
कमठ दलन शिवत्रिय मन रंजन अचल
ध्यान धरतारी जी ॥ स्याम०२॥ प्रभु छवि
लखि शत कोटि पंचशत लज्जित मन महिं
भारी जी ॥ स्याम० ३ ॥ जिन रवि चरण
शरण मानिक नित पतित दुरित तमहारो
जी ॥ स्याम० ४ ॥

१०९ पद–झंझोटी

अब तें नूं जिनमत पायो जगसार रे
॥ टेक ॥ वालापन तें ने खेलि गमायो यो-
बन बनिता लाररे ॥ अब० १ ॥ वृद्ध भये

तृष्णा वश तैं तूं ढोयो कुटुंब को भाररे ॥ अव० २ ॥ लोक लाजतैं बहु अघ कीने तिस फल दुख करतार रे ॥ अव० ३॥ मानिक अजहूं हठ तजि सुलटो होउ भवोदधि पाररे ॥ अव० ४ ॥

११० पद-होरी गत की ॥

धन्य घडी धनि भाग्य हमारो पायो दरश प्रभु थारो ॥ टेक ॥ दरश देखि भ्रम तिमिर पलानो सुख वारिधि विस्तारो ॥ धन्य० १ ॥ नैन सफल भये शांति छवी लखि परम मोद निरधारो ॥ धन्य० २ ॥ मानिक प्रभु के चरण कमल पर तन मन धन परिवारो ॥ धन्य० ३ ॥

१११ पद-राग गौड़ तथा रसिया में ॥

जिय तेरी बड़ी भूलरे जिय तेरी बड़ी भूल ॥टेक। कौड़ी एक कमाई नाहीं खोवत है निज मूल रे ॥ जिय० १ ॥ तारण तरण

देव जिननाथा । सुमिरत नाहिं नवावत माथा ॥ कुगुरादिक कों जोरत हाथा । डारत शिर में धूल रे ॥ जिय० २ ॥ निज स्वभाव को भाव न जाना । परही में नित आपा माना ॥ परके हेत धरें ठग वाना । वोवत पेड़ वंबूल रे ॥ जिय० ३ ॥ अव तें सुगुरु सीख उर धरिले । निज हित हेत सुकरनी करले ॥ मानिक भव सागर कों तरिले । विधिकों कर निरमूल रे ॥ जिय० ४ ॥

११२ पद—होरी नत की ॥

महा मोह शत्रु प्रभु थारो दरश लखन नहीं देयरे ॥ टेक ॥ तुमतें अंतर डारि ताड़िकें निज निधि सव हर लेय रे । गति गति नाच नचावत मोइ कों सुधि वुधि सव हर लेय रे ॥ महा० १ ॥ काल लब्धि बल तुम दरशन रिपु अव कछु निवल प-

रेयरे ॥ महा० २ ॥ मानिक मदत करहु करुणा कर निश्चल पद निवसेय रे ॥महा०३॥

११३ पद–होरी काफी ॥

सखीरी मैं तो जाउंगी गिरि की ओरी प्रभु ही से ध्यान लगा जिय में ॥ टेक ॥ विषय विकार झालसी लागे उर वैराग जगोरी ॥ मैं० १ ॥ अब गृह में कछु काम नहीं कोउ लाख यतनवा करोरी ॥ मैं० २ ॥ मानिक प्रभु पद उर धरि रजमति प्रभु ही की शरण गहोरी ॥ मैं० ३ ॥

११४ पद–रेखता झंगन का ॥

इश्क अब मुझको मेरे निज दर्श का हुआ सही । निश्चल ये जिनराज तेरी सेव में बुधि पर्नई ॥ टेक ॥ भव में भ्रमते अब तलक तुम भेद मैं पाया नहीं। काल लब्धि सुबल परस पद आज मैं निज निधि लई ॥ इश्क० १ ॥ विश्वदर्शी विश्व व्यापी पेर

-मत निज भाव में। ज्यों महीपे चन्द्रिका सुमही स्वरूप नहीं भई ॥ इश्क० २ ॥ शिव मई शिवमार्ग उपदेशन कुशल तुम हो प्रभू भव्यजन भव सिन्धुतें वहुतारि कीने अप मई ॥ इश्क० ३ ॥ मैं दुखी चिरकाल से पर चाह भ्रम आतिश दहा। देखि श्री जिन चन्द्र भ्रम नशि शांतिता प्रगटी नई ॥ इश्क० ॥ ४ ॥ भक्ति भव भव रहो मानिक के हृदय तव तक प्रभू। जब तलक न विभाव नशि सुख होय विश्वातम मई ॥ इश्क० ५ ॥

११५ पद-गजल राग सूर मल्हार ॥

देखो भवि जिनवर छवी यह शांति सुरससूं भरी ॥ टेक ॥ नासिकाग्र दृष्टि महा शुद्ध सु आसन धरें। आनन अरविन्द हंसे मानो वयन उच्चरें ॥ ज्ञान वर विराग हेत देखते कल मल हरें। भव्यजन जलज प्रकाश कों सुरविप्रभा धरें ॥ जासु प्रभा देखि कोटि

भानुकी प्रभाहरी ॥ देखो० १ ॥ घाति कर्म नाशि करि अनंत ज्ञान भासता । जामें लोकालोक के स्वभाव को प्रकाशता ॥ इष्ट औ अनिष्ट कर्म भाव कों विनाशता । निज स्वभाव मांहिं यो ता लीन रहै शाश्वता । अनुभवन करते मुझे ऐसी दशा नजरपरी ॥ देखो० २ ॥ वीतराग नाम महाभाग भक्ति कों करें । जिन के जो अभक्त ते निगोद के मांहीं परें ॥ इन्द्र औ फणेन्द्र चन्द्र चरण नर मस्तक धरें । जाकी ध्वनि सुनि कें परवादी कोटि पर हरें ॥ मानिक कब ऐसी दशा होय सो धनि २ घरी ॥ देखो० ३॥

११६ पद-गौड़ मल्हार ॥

आज जिनवर दरशन पाये ॥ टेक ॥

भूल अनादी तुरत नसानी निज आतम दरशाये ॥ आज० १ ॥ पर की चाह महादव दाहन-सोतो अब मो ढिंग नहिं आ-

वत । परम शांति मुद्रा के निरखत–निज आनंद झरलाये ॥ आज० २ ॥ मोह सुभट जग वश करि राखा-ताका बल अब तोड़ जु नाखा । भव भव संचित अशुभ कर्म जे सो अब तुरत पलाये ॥ आज० ३ ॥ जाको इन्द्र चन्द्र शत वंदत सेवत–मुनि गण पाप निकंदित । मानिक नित दरशन चित चाहत हरखि हरखि गुण गाये ॥ आज० ४ ॥

११७ पद–राग पिल्लू ठुमरी दादरे में

एजी म्हाने प्यारी लगे छवि थारी ॥टेक॥ नाशा अग्र दृष्टि कों धारी बर विरागता कारी ॥ प्यारी० १ ॥ अनुभव रस झलकत मुख पुलकत सुर नर मुनि मनहारी ॥ प्यारी०२॥ अनुपम शांति छवी पर मानिक कोटि मदन परवारी ॥ प्यारी० ॥ ३ ॥

११८ पद–राग पिल्लू ठुमरी दादरे में ॥

एजी मुजरो हमारो लीजे ॥टेक॥ तु म

तो वीतराग आनंद घन हम कों भी अब कीजे ॥ मुज० १ ॥ अधम उधारन शिव सुख कारण समयनि माँहिं भजीजे ॥ मुज० ॥ २ ॥ मानिक चरण शरण गहि लीनो अब निश्चल पद दीजे ॥ मुज० ३ ॥

११९ पद-होरी दीपचंदी ॥

मन मोहो जिनचंद को देखि झलक नित लगी रहत दरशन की ललक ॥ टेक ॥ नासि काग्र दिठि धरत ध्यान वर। भविक मोद हित वर विराग कर ॥ निरविकार निरद्वंद अनोपम। उछलत शांति सुधा की छलक ॥ मन० १ ॥ चिर भ्रम तम निवड़ विनाश करत। भव जिनको भवातप छिन में हरत ॥ स्वपर भेद विज्ञान करत। आज खु-लगई हृदय दृगनि की पलक ॥ मन० २ ॥ पायराह अवरोध रहित वर। गुण अनंत भगवंत सुखाकर ॥ मानिक चित चकोर चाहतनित।

नित उदय रहो त्रिभुवन की झलक ॥ मन० ३ ॥

१२७ पद—राग पिलू ॥

“तर्जं”नादान गउरे वारी ।

जिनराज शरण में थारी । महाराज शरण में थारी । म्हाने तारो जग भरतारो जी ॥ टेक ॥ करी व्याहन की तय्यारी । शिव्र क्षत्र फिरत त्रथ भारी । संग जादो कृष्ण मुरारी जी ॥ जिन० १ ॥ इन्द्रादिक बहु असवारी । जहां नाचें सुरासुर नारी । गुण गावति हैं करि तारी जी ॥ जिन० २॥ श्रीनेमीश्वर छवि भारी । जापें कोटि मदन परवारी । को कवि वरणत बुधि हारी जी ॥ जिन० ३ ॥ नृप उग्रसेन घर नारी गावें मंगल हित गारी । हर्षित अंग अंग अपारी जी ॥ जिन० ४ ॥ पशुवनि की सुनत पुकारी । प्रभु करुणा निज चित धारी । रथ फेरि दियो गिरनारी जी ॥ जिन० ५ ॥

वैराग्य जलधि विस्तारी। सब छांड़ि जगत दुखकारी। भये पंच महाव्रत धारी जी ॥ जिन० ६ ॥ विनवे उग्रसेन कुमारी। हमरी कहा चूक निहारी। प्रभु शिव रमनी चित धारी जी ॥ जिन० ७ ॥ मैं तो बारि हीं वार पुकारी। डूबत भव जल संसारी। मानिक कों करनांहि तारी जी ॥ जिन०८॥

१३१ पद—राग कार्फी स्याग में ॥

एजो म्हाने तारि दोजो श्री जिनदेव मै तो थारो शरण लियो जी ॥ टेक ॥ वरहित कारण विधि गण जारन तारन न रन स्वमेव ॥ थारो० १ ॥ थारो बानी अमृत समानी वरषन ज्यों घन देव ॥ थारो०२॥ मानिक इमि लखि शरण लियाहै देउ चरण की सेव ॥ थारो० ३ ॥

१३३ पद—राग भंभोटी ॥

जे नर ध्यावत जिन गुण माला ॥जेनर०

॥ टेक ॥ तिनकों प्रगट इन्द्र नरपति पद पुनि बिलसें शिव वाला ॥ जे० १ ॥ जिन मानुष भव सफल कियो है ते होवें जिन पाला ॥ जे० २ ॥ तिन मिथ्या भ्रम नाश कियो है तिन घट प्रगट उजाला ॥जे०॥३॥ प्रभु कों ध्यावत प्रभु पद पावत इन्द्र नवावत भालो ॥ जे० ४॥ जिन निज आतम प्रगट लखो तिन परखो निज पर हाला ॥ जे० ५ ॥ आप तरें अरु परको तारत अति भारी भव नाला ॥ जे० ६ ॥ तिन प्रसंग मानिक नहिं काटत मिथ्या विषधर काला ॥ जे० ७ ॥

१२३ पद—राग जत ठुमरी में चलती दीपचंदी ॥

मोह बिधि ने घुमरिया कैसी दई । जासूं स्वपर भेद बुधि बिसर गई ॥ टेक ॥ पर अपना बत परही कों ध्यावत आप गिनत नित परही मई ॥ मोह० १ ॥ कबहुं